सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त दर्शन का संदेश

सांख्य दर्शन :-

1. यहां सांख्य का सम्बन्ध संख्या से नहीं है, अपितु 'सम्यक् ख्यानम्' अर्थात 'विशेष विचार' है।
2. मूल का मूल ढूँढ़ना व्यर्थ है क्योंकि जिसका कोई मूल न हो उसी को मूल कहा जाता है।
3. जिसमें जैसी शक्ति है वह वैसे ही कार्य उत्पन्न कर सकता है। पीपल के पेड़ से पीपल का पेड़ ही उत्पन्न हो सकता है। कार्य पूरी तरह कारण के गुण नहीं त्यागता।
4. कोई भी परिणाम निरर्थक नहीं है। यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड जीवात्मा के लिए ही उत्पन्न हुआ है।
5. कर्म के अनुसार जीव को योनि और भोग प्राप्त होते हैं। पूरी सृष्टि की विचित्रता कर्मों की विचित्रता के कारण ही है।
6. हमारे कर्तव्य कर्म वे हैं जो हमारे आश्रम के लिए विहित हैं।
7. जो प्रमाण से दृष्ट है, उसका कल्पना से विरोध नहीं हो सकता।
8. संसार में दो प्रकार के तत्त्व हैं - जड़ और चेतन। दोनों के आपसी सहयोग से ही समस्त सृष्टि गतिशील और क्रियाशील होती है।
9. सभी भोग्य पदार्थ सृष्टि के भोगने के लिए ही निरन्तर बनते रहते हैं।
10. अभाव से भाव नहीं होता। पानी से मक्खन नहीं निकाला जा सकता।
11. प्रकृति जड़ है। वह स्वयं कोई क्रिया नहीं कर सकती। चेतन तत्त्व प्रभु की शक्ति के सहयोग से ही प्रकृति जगत की रचना करती है। मिट्टी जड़ पदार्थ है, जब तक कुम्हार इसका घड़ा आदि नहीं बनाता तब तक उसका कुछ नहीं बनता।
12. प्रकृति के भोग्य पदार्थ चेतन जीवात्मा के भोग के लिए ही है। जड़ पदार्थों का प्रयोग तो चेतन जीवात्मा ही कर सकता है।
13. जब साधक सब बाह्य विषयों से स्वयं को हटा लेता है तब वह अधिक सुख और पूर्ण शान्ति को प्राप्त करके प्रसन्न रहता है। इस स्थिति में आत्मा अपने स्वरूप में लीन हो जाता है।
14. जन्म और मृत्यु के समय सूक्ष्म शरीर आत्मा के साथ ही रहता है। मोक्ष की प्राप्ति होने पर स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर से जीवात्मा स्वतन्त्र हो जाता है। विवेक ज्ञान की प्राप्ति होने पर मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है।
15. धारणा - मन को शरीर के किसी एक स्थान पर टिका कर एकाग्रता प्राप्त करना धारणा है। धारणा द्वारा ध्यान का अभ्यास करते रहने से समाधि की अवस्था तक पहुँचकर आत्म साक्षात्कार किया जा सकता है।
16. जीवन में अधिक वस्तुएं इक्ट्ठा करना, उनके प्रति मोह होने से साधना में बाधा पड़ती है। जिन वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती उनको प्रसन्नता से त्याग देने अथवा बांट देने में सुख और उल्लास की प्राप्ति होती है।
17. केवल चिन्तन-मनन करने से आत्म-ज्ञान प्राप्त नहीं होता, इसके लिए भौतिक विषयों की इच्छाओं का त्याग भी करना पड़ता है। जब दृढ़ संकल्प से इन को त्याग दिया जाता है तब मन शुद्ध और निर्मल होता जाता है और आत्म ज्ञान की अनुभूति होने लगती है।
18. जैसे मैले दर्पण से किसी का मुख मण्डल स्पष्ट दिखाई नहीं देता वैसे ही मैले अर्थात अपवित्र मन से आत्मा का साक्षात्कार नहीं हो सकता। जब मन में किसी के प्रति राग-द्वेष की भावना रहती है तब भी आत्मज्ञान प्राप्त नहीं होता।

19. चित्त व मन को सदा निर्मल और पवित्र रखने के लिए पुण्य कर्म अर्थात श्रेष्ठ कर्मों को निरन्तर करते रहना चाहिए। यही सज्जनता व शिष्टाचार की पहचान है। केवल श्रेष्ठ व पुण्य कर्मों के करने से ही हमें परमात्मा के प्यार की अनुभूतियां होती हैं। इस से मन भी प्रसन्नता व उल्लास से सदा शान्त व सन्तुष्ट रहता है।
20. परमात्मा सत-चित-आनन्द स्वरूप है। जीवात्मा केवल सत और चित है, इसका स्वभाव आनन्द नहीं है। इस लिए इसे आनन्द प्राप्त करने के लिए बहुत दौड़-धूप करनी पड़ती है।
21. सुषुप्ति अवस्था में जब तमोगुण बढ़ जाता है तब प्राणी सुख-दुख का अनुभव नहीं करता। उस समय उसका बाहर के विषयों से सम्बन्ध नहीं रहता। प्रातः काल जागने पर वह कहता है कि आज बहुत अच्छी नींद आई। सुषुप्ति में अमीर-गरीब, ज्ञानी-मूर्ख सबकी अवस्था एक समान होती है।
22. यम-नियम का निरन्तर अभ्यास करने से वैराग्य की अनुभूति होने लगती है।
23. स्फटिक मणि का अपना कोई रंग नहीं होता। उसके सामने जिस रंग का फूल रख दिया जाए वह उसी रंग का दिखाई देने लगता है। आत्मा का स्वरूप शुद्ध, निर्मल और पवित्र है। परन्तु बुद्धि उसके सामने जैसा विषय रखती है उसका स्वरूप वैसा ही दिखाई देने लगता है।

योग दर्शन :-

1. आत्मा और परमात्मा के मिलन को योग कहते हैं।
2. सृष्टि के निर्माण के बाद ऋषियों ने वेद के रूप में ईश्वर से ही ज्ञान प्राप्त किया था। इस लिए ईश्वर गुरुओं का भी गुरु है।
3. अपने कर्त्तव्यों को धर्म के अनुसार पूर्ण करने से दुःखों की निवृत्ति हो जाती है। फिर सहज में मोक्ष की प्राप्ति का आनन्द प्राप्त होने लगता है।
4. सुखी व सम्पन्न व्यक्ति के साथ मित्रता के भाव रखे।
   दुखी व्यक्ति के प्रति दया के भाव रखे।
   सज्जन के प्रति मन में प्रसन्नता व उल्लास के भाव रखे।
   पापियों के प्रति उपेक्षा का भाव रखे।
5. सुख-दुख, लाभ-हानि, मान-अपमान आदि द्वन्द्वों को धैर्य व संयम से सहन करते रहना ही तप कहा जाता है।
6. आर्ष ग्रन्थों का पढ़ना-पढ़ाना, उनके अनुसार अपनी जीवन शैली बनाना ही स्वाध्याय है।
7. किसी वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा ही राग कहलाता है।
8. बुद्धि और आत्मा समान रूप से पवित्र होने पर जीवात्मा मुक्ति को प्राप्त करता है।
9. कर्मों के तीन भाग -
   क. क्रियमाण - जो कर्म मनुष्य द्वारा किए जा रहे हैं।
   ख. संचित - जिन कर्मों का फल अभी मिला नहीं।
   ग. प्रारब्ध - जिन कर्मों का फल भोगा जा रहा है।
10. जीवात्मा जो शुभाशुभ कर्म करता है उनके संस्कार चित्त पर पड़ते हैं। फिर यही संस्कार पाप-पुण्य कर्म करने का कारण बनते हैं।
11. लाभ-हानि, मान-अपमान आदि का प्रभाव जीवात्मा पर पड़ता है, चित्त पर नहीं पड़ता।

मीमांसा दर्शन

1. किसी पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को मन में जानने की अभिलाषा को मीमांसा कहा जाता है।
2. किसी भी लक्ष्य को प्राप्त करना हो तो पहले उसके विषय में ज्ञान प्राप्त कर लेना चाहिए। फिर उस ज्ञान के अनुसार श्रद्धा, निष्ठा व विश्वास से काम करते रहने से ही सफलता मिल सकती है।
3. परमात्मा जगत की उत्पत्ति, पालन और प्रलय करता है। साथ ही जीवन को सुखी, सन्तुष्ट व ऐश्वर्यशाली बनाने के लिए वेदों का ज्ञान देता है।
4. ऋग्वेद उसे कहते हैं जिसमें छन्दोबद्ध मन्त्र होते हैं।
   जिन मन्त्रों को गाया जाता है, उन्हें सामवेद कहते हैं।
   जो मन्त्र छन्द शास्त्र के अनुसार नहीं हैं और जो गाए नहीं जाते वे यजुर्वेद कहलाते हैं।
   जिन मंत्रों का अर्थ सरल और स्पष्ट होता है वे अथर्ववेद कहलाते हैं।
5. यज्ञ के फल का अधिकारी तो केवल यजमान ही होता है।
6. अपनी इच्छानुसार कर्म करने को पुरुषार्थ कहा जाता है।
7. जैसे सूर्य के प्रकाश पर स्त्री-पुरुष दोनों का अधिकार है वैसे ही वेद ज्ञान पर भी स्त्री-पुरुष दोनों का अधिकार है।
8. जैसे बीज के अनुसार ही फल होता है ऐसे ही कर्म के अनुसार ही फल मिलता है।

वेदान्त दर्शन

1. वेदान्त - जिस में वेद के अन्तिम सिद्धान्तों व लक्ष्य का उल्लेख किया गया है। वेदों के स्वाध्याय से ब्रह्म के जिस परम स्वरूप को जाना जाता है उस का उल्लेख जिस ग्रन्थ में है उसे 'वेदान्त दर्शन' कहते हैं।
2. सृष्टि में जड़-चेतन में जो विधि-विधान है वैसा ही वेदों का ज्ञान है। ऐसा इस लिए है कि दोनों का कर्त्ता-धर्त्ता एक परमेश्वर ही है। आँखों से देखा जाता है, कानों से सुना जाता है। वेदों में भी ऐसा ही बताया गया है।
3. ब्रह्म के समीप जाने से आनन्द का अनुभव होता है क्योंकि ब्रह्म आनन्द स्वरूप है।
4. मिट्टी से घड़ा बनता है। जो गुण मिट्टी में है वही गुण घड़े में है।
5. संसार में सुख-दुख आदि विषमता और भिन्नता का कारण परमात्मा नहीं, मनुष्य के अपने अच्छे बुरे कर्म हैं।
6. शरीर की रचना पांच भूतों - अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश से हुई है। इसलिए इसे पाँच भौतिक शरीर कहते हैं। इसमें पृथ्वी का अंश अधिक है इसलिए इसे पार्थिव शरीर भी कहते हैं।
7. जब जीवात्मा मृत्यु के समय एक शरीर छोड़कर दूसरे शरीर में जाता है तब वह अकेला नहीं जाता, उसके साथ सूक्ष्म शरीर भी जाता है। मनुष्य शरीर में किए पुण्य-पाप के संस्कार सूक्ष्म शरीर में संचित होते हैं। वे भी पुनर्जन्म में साथ रहते हैं।
8. मोक्ष में आत्मा अपनी संकल्प शक्ति से आनन्द को प्राप्त करता है जैसे जीवात्मा स्वप्न में शरीर और इन्द्रियों के बिना ही सुख-दुख की अनुभूति करता है।

कृष्ण चन्द्र गर्ग
0172-4010679
kcg831@yahoo.com